अनौपचारिक क्षेत्र और लोकविद्या

अमित बसोले

यह विचार कि कार्य से हासिल ज्ञान औपचारिक शिक्षा से हीन नहीं है, इतिहास से लेकर विज्ञान और मनोविज्ञान से लेकर ज्ञान प्रबंधन के विविध क्षेत्रों में व्यापक स्वीकृति अर्जित कर रहा है। विज्ञान से संबंधित इतिहासकार यह बताते हैं कि दर्शन शास्त्र, विज्ञान और गणित का निर्माण कारीगरों और हस्तशिल्पियों द्वारा व्यावहारिक समस्याओं के समाधान के लिए किए गए विकास के रूप में हुआ न कि उनसे अलग किया गया

असंगठित क्षेत्र के बारे में आमतौर पर सोचा जाता है कि इसमें अधिकतर अकुशल या अल्प कुशल श्रमिक कार्य करते हैं। असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों के राष्ट्रीय आयोग (एनसीईयूएस) ने भी यही स्थिति मानी है कि असंगठित कार्यबल का विशाल भाग अकुशल है (सेनगुप्ता व अन्य, 2009:3)। यह निष्कर्ष दो अनुभवजन्य तथ्यों पर निर्भर करता है: असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों में औपचारिक शिक्षा और प्रशिक्षण का निम्न स्तर, और इस क्षेत्र में प्रचलित कम मजदूरी के साथ ही कम उत्पादकता। अपने इस लेख में मैं इन दोनों ही परिप्रेक्ष्यों पर निकट से विचार करूंगा। इस मुद्दे पर अधिकांश नीति और शैक्षणिक दृष्टिकोण के विपरीत, मेरा दावा है कि ज्ञान हस्तांतरण और कौशल के गठन के दृढ़-स्थापित (हालांकि उचित तरह से न समझे गए) प्रतिष्ठानों के साथ ही अनौपचारिक क्षेत्र में ज्ञान का एक विशाल भंडार मौजूद है। इस मुद्दे पर प्रकाशित अध्ययनों के अतिरिक्त, यह निबंध लघु उद्योग की जनगणना के अनुभवजन्य आंकड़ों की ओर भी ध्यान आकर्षित करता है, जो बनारस के बुनकरों व खाद्य विक्रेताओं और मुंबई के मार्गों पर विक्रय करने वालों के बीच कार्य के अनुभवों पर आधारित हैं।

विश्व बैंक और विश्व बौद्धिक संपदा संगठन जैसे प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थान भी हाल ही में *पारम्परिक और स्वदेशी ज्ञान* की दिशा में गंभीरता से संलग्न हुए हैं, जिनके बारे में माना जाता है कि उनके पास एक विश्वदृष्टि और ज्ञानवाद के साथ ही ज्ञान उत्पादन संस्थाएं और आधुनिक ज्ञान से अलग हस्तांतरण की क्षमता है। इस मामले में विशाल साहित्य सामने आया है, जो जैव विविधता, कृषि वानिकी, पारिस्थितिकी, औषधि, शिल्प आदि के ज्ञान भंडार का विश्लेषण और वर्णन करता है, जिसका निर्माण दुनियाभर के किसानों, कामगारों, महिलाओं और स्वदेशी लोगों द्वारा सदियों से किया गया है (बसोले 2012)। ये वही लोग हैं, जो अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में कार्य करते हैं। हालांकि, अनौपचारिक क्षेत्र के विश्लेषण के लिए *पारम्परिक और स्वदेशी ज्ञान* प्रतिमान को पर्याप्त तौर पर अभिनियोजित नहीं किया गया है। ऐसा शायद इसलिए हुआ है कि असंगठित श्रमिक और उद्यमी न केवल कृषि और हस्तशिल्प के क्षेत्र में पाए जाते हैं, बल्कि खाद्य, कपड़ा, परिधान, प्लास्टिक, धातु, मशीनरी, निर्माण और सेवा क्षेत्र जैसे विविध उद्योगों में भी पाए जाते हैं, जो अक्सर आधुनिक तकनीक का उपयोग करते हैं और पारम्परिक उद्योग के लेबल में सही नहीं बैठते। न ही वे स्वदेशी लोगों के तौर पर कार्य करने वाले माने जा सकते हैं। सहस्रबुद्धे एवं सहस्रबुद्धे (2001) ने इसके लिए *लोकविद्या* या लोगों का ज्ञान, परिभाषा का प्रस्ताव किया है, जिसमें ऐसे लोगों का कौशल शामिल है, जो औपचारिक रूप से शिक्षित या प्रशिक्षित नहीं हैं। बल्कि वह इन्हें ज्ञान पद्धति और मूल्य प्रणाली में शामिल करने के लिए इससे भी परे जाते हैं। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की कल्पना के अनुसार भारत को ज्ञान समाज में परिवर्तित करने के लिए, हमें देश के विशाल बहुसंख्य श्रमजीवी वर्ग द्वारा उपयोग में लाए जा रहे लोकविद्या उत्पादन की पहचान और अध्ययन की दिशा में अच्छी तरह से कार्य करना होगा।

लेखक अमेरिका के बोस्टन स्थित यूनिवर्सिटी आफॅ मैसाचुसेट्स के अर्थशास्त्र विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं। वह विकास अर्थशास्त्र तथा राजनीतिक अर्थशास्त्र जैसे विषय पढ़ाते हैं। गांधीजी के आर्थिक विचार, अर्थशास्त्र एवं पारंपरिक ज्ञान, गरीबी और असमानता, अनौपचारिक तथा कुशल क्षेत्रों की राजनितिक अर्थव्यवस्था आदि उनकी रुचि के शोध विषय हैं। ईमेल: abasole@gmail.com

मजदूरी, उत्पादकता और कौशल के मध्य

असंगठित क्षेत्र में कम मजदूरी की व्यापकता और कम उत्पादकता का इस्तेमाल अक्सर अल्प कौशल-आधार के सबूत के तौर पर किया जाता है। वास्तव में, कौशल, उत्पादकता और पारिश्रमिक के मध्य पेचीदा संबंध है और यह संस्थागत और संरचनात्मक कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है। भारत जैसे विकासशील अर्थ व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण संरचनात्मक यथार्थ, अधिशेष श्रम का अस्तित्व है। संगठित क्षेत्र से बहुसंख्य श्रमजीवी के अपवर्जन का ही नतीजा है, उत्पाद बाजार में नौकरियों की कमी के कारण स्वव्यवसाय शुरू करने के लिए बाध्य, अत्यन्त लघु-उद्यमियों और असंगठित श्रम बाजार के श्रमिकों के मध्य जबरदस्त प्रतिस्पर्धा। इसलिए अनुसंधान का एक घटक, इस बात की जांच करना भी है कि क्या संगठित - असंगठित आय का अंतर, सिर्फ अवलोकित श्रमिक विशेषताओं (जैसे कौशल) के कारण ही है या प्रतिष्ठानों के औसत आकार, उत्पाद बाजार में प्रतिस्पर्धा के स्तर और पूंजी-श्रम अनुपात जैसे संरचनात्मक कारकों की वजह से भी है। इसके अलावा, चूंकि उत्पादकता की माप जैसे कि प्रति श्रमिक मूल्य-वर्धन, बाजार की कीमतों पर निर्भर है और उत्पाद बाजार में अत्यधिक प्रतिस्पर्धा कीमतों को कम रखने के लिए दबाव डालती है, इसका तात्पर्य है कि अधिक प्रतिस्पर्धी बाजारों के प्रतिष्ठान, बाजारों की शक्ति का लाभ उठाने वाले प्रतिष्ठानों की बनिस्बत कम उत्पादक प्रतीत होते हैं।

एक दूसरा जटिल कारक है, एक ऐसी अर्थव्यवस्था में पारिश्रमिक से कौशल या अन्य श्रमिक विशेषताओं का अनुमान लगाना, जिसमें अधिशेष श्रमिक, यहां तक कि कुशल श्रमिक भी कम मोल-भाव की क्षमता के कारण कम मजदूरी पा सकते हैं (नोरिंगा 1999 / लाएबॅल एंड रॉय 2004)। इसके अतिरिक्त, उत्पादकता में वृद्धि नियोक्ताओं को अधिक मुनाफे के रूप में हासिल होती है या यदि उत्पाद बाजार खरीददारों के बजाए श्रमिकों के लिए कम कीमतों के तौर पर अधिक प्रतिस्पर्धी है (हाइंज़ 2006)। मिसाल के लिए, बनारस में बुनकर उद्योग और पॉवरलूम, हथकरघा से दस गुना अधिक उत्पादक हैं, लेकिन दोनों में प्रति घंटा मजदूरी लगभग समान है (बसोले 2014)।

ज्ञान क्या है?

अकुशल के रूप में अनौपचारिक श्रमिकों की धारणा सिर्फ ऊपर उल्लिखित आर्थिक कारकों पर ही निर्भर नहीं है। प्रतिष्ठा या विभिन्न प्रकार के ज्ञान से जुड़े मूल्य जैसे सामाजिक पहलू और किसकी गणना ज्ञान के रूप में होती है, जैसे दार्शनिक कारक भी महत्वपूर्ण हैं।

मिसाल के लिए, अनौपचारिक क्षेत्र मे अधिक प्रतिनिधित्व रखने वाले निचली जाति के श्रमिकों और महिलाओं के ज्ञान को पारम्परिक तौर पर कम आंका गया है (इलियाह 2009)।

उत्पादकता की माप जैसे कि प्रति श्रमिक मूल्य-वर्धन, बाजार की कीमतों पर निर्भर है और उत्पाद बाजार में अत्यधिक प्रतिस्पर्धा कीमतों को कम रखने के लिए दबाव डालती है, इसका तात्पर्य है कि अधिक प्रतिस्पर्धी बाजारों के प्रतिष्ठान, बाजारों की शक्ति का लाभ उठाने वाले प्रतिष्ठानों की बनिस्बत कम उत्पादक प्रतीत होते हैं।

एनसीईयूएस की टिप्पणी है कि महिलाओं द्वारा किए गए कार्यों को 'कम कौशल' के रूप मे आंका गया हो सकता है, भले ही वे असाधारण प्रतिभा और वर्षों अनौपचारिक प्रशिक्षण में संलग्न रही हों (सेनगुप्ता व अन्य .2007 : 84)।

कपड़ा और सिरामिक उद्योग से इसकी मिसाल मिलती है, जहां महिलाएं कुशल श्रम कार्य करती हैं (जैसे- कढ़ाई या मिट्टी की तैयारी), लेकिन वह सबसे कम पारिश्रमिक पाने वाले श्रमिकों में से एक हैं (पूर्वोक्त)। बसोले बताते हैं कि बनारस में महिला कढ़ाई मजदूर पूरा एक दिन काम करने के एवज में सिर्फ 25-30 रुपये की नगण्य-सी कमाई करती हैं। व्यापारी और यहां तक कि महिलाएं स्वयं इस आधार पर इसे जायज ठहराती हैं कि उन्हें उस कार्य के लिए पारिश्रमिक दिया गया है, जिसमें ऐसी कुशलता की आवश्यकता होती है जो महिलाओं में 'स्वाभाविक' तौर पर होती है और वह इस कार्य को अपने 'खाली समय' में करती हैं।

आधिकारिक सर्वेक्षण, जिनमें अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के ज्ञान के आधार की पहचान करने का प्रयास किया गया, आम तौर पर अपर्याप्त हैं क्योंकि उन्हें लोकविद्या को अधिकृत करने के लिए डिजाइन नहीं किया गया है। लघु उद्योगों की तीसरी और चौथी अखिल भारतीय जनगणना (भारत सरकार 2004) में प्रतिष्ठानों से उनके तकनीकी ज्ञान के स्रोतों के बारे में जानकारी मांगी गई। तालिका 1 में दिखाया गया है कि अपंजीकृत (यानी असंगठित) प्रतिष्ठानों का लगभग 90 प्रतिशत दोनों ही वर्ष 'कोई स्रोत नहीं' की अवशिष्ट श्रेणी में आया। चूंकि अधिकांश प्रतिष्ठान, चाहे वह कितने ही छोटे क्यों न हों, तकनीकी ज्ञान के कुछ कोष के साथ काम करते हैं और वे भी स्रोत-आधार या बाजार की मांग में परिवर्तन के आधार पर नवाचार कर सकते हैं (चाहे कितना वृद्धिशील और छोटा हो), सर्वेक्षण यह समझने में मदद नहीं करता कि ज्ञान कैसे अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इसे शिल्पकारों और श्रमिकों के 'आंतरिक' (इन-हाउस) ज्ञान, उनके अनौपचारिक नेटवर्क और अपनी जरूरतों के मुताबिक औपचारिक क्षेत्र के ज्ञान की नकल या अनुकूलन की उनकी क्षमता को हस्तगत करने के लिए परिकल्पित नहीं किया गया है।

तालिका 1 : अपंजीकृत लघु उद्योग क्षेत्र में तकनीकी जानकारी का स्रोत

स्रोत	2001	2007
विदेश में	0.67	0.80
घरेलू सहभागिता	5.58	2.11
घरेलू अनु.एवं विकास	4.84	3.22
कोई नहीं	88.91	92.83

स्रोत: *तीसरी लघु उद्योग गणना, 2000-01 और चौथी एमएसएमई जनगणना, 2006-07*

नवीनतम एनएसएस रोजगार-बेरोजगारी सर्वेक्षण (2011-12) में पाया गया कि 15 वर्ष से अधिक आयु के 70 प्रतिशत ग्रामीण और 43 प्रतिशत शहरी पुरुषों की सामान्य शिक्षा माध्यमिक स्तर से कम है (जबकि इसी वर्ग में महिलाओं का प्रतिशत 83 और 55 है)। कार्यबल में रोजगारोन्मुखी कौशल के लिए अन्य प्रकार के अधिक प्रासंगिक प्रशिक्षण और भी कम हैं। ईयूएस के आंकड़े यह भी दिखाते हैं कि कार्यबल के 89 प्रतिशत को कोई औपचारिक या अनौपचारिक तकनीक या व्यावसायिक प्रशिक्षण हासिल नहीं है (बसोले 2012)। इसके और एनएसएस के इसी तरह

के आंकड़ों के आधार पर एनसीईयूएस ने यह निष्कर्ष निकाला है कि '15 वर्ष के ऊपर की आबादी के लगभग 90 प्रतिशत के पास कोई कौशल नहीं था' (सेनगुप्ता व अन्य 2009:191)।

हम इस निष्कर्ष को कैसे समझ सकते हैं? मेरा यहां सुझाव है कि असंगठित क्षेत्र में कौशल अर्जन प्रक्रिया के साथ ही साथ ज्ञान उत्पादन को इस तरह के रूढ़िवादी सर्वेक्षणों के जरिए हस्तगत करना मुश्किल है, जो इन प्रक्रियाओं को वर्षों की स्कूली शिक्षा, एक प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने और प्रमाण पत्र प्राप्त करने इत्यादि के समान बनाते हैं। ये अक्सर असंगठित क्षेत्र में अनुपस्थित होते हैं। ज्ञान अर्जन की प्रक्रिया के बजाए यह आजीविका कमाने के साथ जुड़ी हुई है। ऐतिहासिक तौर पर, संगठित रूप से अर्जित शैक्षिक और नीति कार्य की शिक्षा के प्रति एक पूर्वाग्रह रहा है।

बनारस के बुनकर अक्सर अनौपचारिक और औपचारिक शिक्षा के बीच श्रम बाजार द्वारा रखे गए विभिन्न मूल्यांकन के विपरीत विरोधाभास पैदा करते हैं, जिन्होंने अनौपचारिक प्रशिक्षण में उतने ही साल बिताए, जितने एक औपचारिक डिप्लोमा या प्रमाण पत्र हासिल करने में लगते हैं

इसके अलावा, कुछ असंगठित श्रमिकों में यह ज्ञान पदानुक्रम स्थित होता है और यहां तक कि वह अपने इस ज्ञान को शिक्षा और प्रशिक्षण के परिणाम के रूप में नहीं देखते, बल्कि आम तौर पर कार्य करते समय अर्जित मानते हैं (जो कि आधिकारिक सर्वेक्षण में उनकी नकारात्मक प्रतिक्रिया को समझाता है)। इस बारे में एक आम भावना बनारस के एक मिठाई-विक्रेता ने मुझसे व्यक्त की, जब उनसे यह पूछा गया कि उनके उद्योग में श्रमिक कैसे यह कौशल हासिल करते हैं। 'इसमें अध्ययन करने लायक ऐसा कुछ भी नहीं है।' उसी समय, उनमें यह जागरूकता भी हो सकती है कि मौजूदा पदानुक्रम अन्यायपूर्ण है। बनारस के बुनकर अक्सर अनौपचारिक और औपचारिक शिक्षा के बीच श्रम बाजार द्वारा रखे गए विभिन्न मूल्यांकन के विपरीत विरोधाभास पैदा करते हैं, जिन्होंने अनौपचारिक प्रशिक्षण में उतने ही साल बिताए, जितने एक औपचारिक डिप्लोमा या प्रमाण पत्र हासिल करने में लगते हैं (बसोले 2012)।

यह विचार कि कार्य से हासिल ज्ञान औपचारिक शिक्षा से हीन नहीं है, इतिहास से लेकर विज्ञान और मनोविज्ञान से लेकर ज्ञान प्रबंधन के विविध क्षेत्रों में व्यापक स्वीकृति अर्जित कर रहा है। विज्ञान से संबंधित इतिहासकार यह बताते हैं कि दर्शन शास्त्र, विज्ञान और गणित का निर्माण कारीगरों और हस्तशिल्पियों द्वारा व्यावहारिक समस्याओं के समाधान के लिए किए गए विकास के रूप में हुआ न कि उनसे अलग किया गया (कोनर 2005)। ठेठ कारीगर, शिल्प के दैनिक व्यवहार में सन्निहित विज्ञान और तकनीकी ज्ञान से हर समय जुड़े रहते थे। ज्ञान प्रबंधन के क्षेत्र में 'व्यवहारिक ज्ञान' परिपेक्ष्य में बार्नेट (2000:17) आगे कार्य को ज्ञान उत्पादन के क्षेत्र के तौर पर उल्लिखित करते हैं और यह दावा रखते हैं कि ज्ञान तभी प्रामाणिक है यदि इसे कार्य में परिणत किया जा सके और कार्य ज्ञान परीक्षण का एक साधन है। न सिर्फ कार्य, बल्कि खेल से भी सीखा जा सकता है। मिसाल के तौर पर बुनकर परिवारों के बच्चे जब उनके पिता/भाई बुनाई का काम कर रहे होते हैं, ताने पर शटल से खेलते रहते हैं या कार्यशाला में महज घूमते रहते हैं काम के स्थान और आवाजों के अभ्यस्त हो जाते हैं (वुड 2008)। इस सैद्धांतिक नजरिए का इस्तेमाल ज्ञान उत्पादन की गतिशीलता और अनौपचारिक क्षेत्र में प्रसार को समझने के लिए किया जा सकता है।

लोकविद्या प्रतिष्ठान

प्रशिक्षुता के अर्थशास्त्र और काम पर तालीम पर काफी कम साहित्य उपलब्ध हैं यहां तक कि अगर असंगठित क्षेत्र की बात करें तो ऐसी व्यवस्था, औपचारिक शिक्षा व्यवस्था के मुकाबले कई गुणा ज्यादा लोगों के काम आती है। भले ही समकालीन कारीगरी प्रतिष्ठानों के सर्वेक्षण प्रशिक्षुता और कौशल स्थानांतरण के अन्य 'वंशानुगत व्यवस्थाओं' के महत्व को प्रकट करते हैं (पार्थसारथी 1999), दुर्लभ अपवादों के साथ (बिस्वास एवं राज 1996), अधिकांश विकास अर्थशास्त्रियों ने अनौपचारिक उद्योगों का अध्ययन करते समय कौशल अर्जन की पड़ताल को छोड़ दिया है। ऐसे प्रतिष्ठानों और उनके द्वारा प्रदान कौशल का अध्ययन करने में

प्रशिक्षण या सीखने की मात्रा आसानी से नापी नहीं जा सकती है और इस बारे में कोई औपचारिक प्रलेखन मौजूद नहीं है। इसमें कोई शुल्क नहीं है, प्रशिक्षुता के दौरान मजदूरी, प्रशिक्षक और प्रशिक्षु के समय की अवसर लागत जैसी निहित लागत आती है।

समस्या यह नहीं है कि वे असंरचित या अव्यवस्थित हैं, बल्कि हमारी जांच के तरीके उपयुक्त नहीं हैं। अनौपचारिक प्रशिक्षण प्रणालियों का अध्ययन करने में मुख्य बाधा यह है कि वे हमारे सामान्य जीवन और कार्य के साथ भली प्रकार एकीकृत हैं। उसमें हमेशा ही एक ज्ञात स्थान या समय नहीं होता, जहां सीखना होता है। प्रशिक्षण या सीखने की मात्रा आसानी से नापी नहीं जा सकती है और इस बारे में कोई औपचारिक प्रलेखन मौजूद नहीं है। इसमें कोई शुल्क नहीं है, हालांकि प्रशिक्षुता के दौरान मजदूरी और प्रशिक्षक और प्रशिक्षु के समय की अवसर लागत जैसी निहित लागत आती है। यह प्रक्रिया परिवार, जाति, लिंग और समुदायिक रिश्तों के साथ जुड़ी हुई है, जिन्हें कि 'आर्थिकेतर' माना जाता है। इसके लिए एक नृवंशविज्ञान (एंथोग्राफिक) दृष्टिकोण आवश्यक है, जिसे अपनाने में अर्थशास्त्री आम तौर पर संकोच करते हैं। इसलिए इस तरह के संस्थानों के बारे में हमारा अधिकांश ज्ञान आर्थिक मानव विज्ञानियों से आता है (बारबर 2004 / बसोले 2012)।

जब हम असंगठित क्षेत्र को, इसके ज्ञान संस्थानों को समझने के नजरिए से देखने का प्रयास करते हैं (यथा कौशल अर्जन, नवाचार, प्रतिष्ठानों के मध्य ज्ञान को साझा करना), तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इस क्षेत्र के प्रति रूढ़िवादी धारणा अकुशल मजदूरों के लिए कुल मिलाकर गलत है। साक्षात्कारों से पता चलता है कि असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों ने उतने ही लंबे समय के लिए प्रशिक्षण लिया है, जितना समय औपचारिक प्रमाणपत्र या डिग्री प्राप्त करने में लगता है। परिवार आधारित और इससे इतर प्रशिक्षुता जो कुछ महीनों से लेकर कुछ वर्षों तक हो सकती है, पूरे क्षेत्र में आम है। औपचारिक शिक्षा की तुलना में यहां प्रवेश के लिए वित्तीय बाधाएं अक्सर कम हैं (हालांकि जाति या लिंग के मानदंड जैसी संस्थागत बाधाएं अधिक हो सकती हैं)। प्रशिक्षण की इन पद्धतियों को अच्छी तरह से विकसित

और संरचित किया जा सकता है जो श्रमिकों और उनके प्रशिक्षकों के व्यक्तिगत अनुशासन और जानने की इच्छा के महत्व को रेखांकित करते हैं। नियोक्ता अपने कुशल श्रमिकों को संरक्षित करते हैं क्योंकि अधिकांश ज्ञान औपचारिक रूप से की जा रही प्रक्रियाओं और दिनचर्यायों के बजाए श्रमिकों में सन्निहित होता है। श्रमिक ऐसे रोजगार की तलाश मे रहते हैं, जहां नया कौशल सीखा जा सकता हो। श्रमिक न केवल उत्पादन उन्मुख कौशल, बल्कि संचार की तरह के मृदु (सॉफ्ट) कौशल भी अर्जित कर रहे हैं। बिड़ला और बसोले (2013) ने मुंबई में सड़क-विक्रेताओं, टैक्सी चालकों और यात्रा गाइडों की अंग्रेजी भाषा अर्जन की प्रक्रिया को समझने के लिए उनका साक्षात्कार लिया। ये श्रमिक न सिर्फ अपने वरिष्ठों से सीखते हैं, बल्कि सार्वजनिक सूचना-पट्ट और होर्डिंग, ग्राहक संपर्क और नए मोबाइल उपकरण और अन्य प्रकार की प्रौद्योगिकी, आदि सभी इनके कौशल विकास में योगदान देते हैं। जैसा कि मुंबई के प्रसिद्ध लिंकिंग रोड की एक दुकान का मालिक इसका वर्णन करता है कि लिंकिंग रोड ही इनका स्कूल बन जाता है। बारबर (2004) प्रवेश की कम बाधाओं, नवाचार और अनुकूलन पर जोर जैसी शिक्षा की ताकत की पहचान अक्सर संसाधनों की खराब स्थिति और निहित ज्ञान के विकास के तौर पर करता है। उसके अध्ययन में जो दोष नजर आते हैं, वे अपर्याप्त सैद्धांतिक समझ और प्रतिबिंब, नई तकनीकों और सुरक्षा अभ्याओं को अपनाने के प्रति उनके हठ के कारण थीं।

अंत में, हालांकि इस पर विस्तृत चर्चा संभव नहीं है, मैं असंगठित क्षेत्र में प्रतिष्ठान-स्तर के नवाचार की पड़ताल के महत्व की ओर इंगित करना चाहूंगा। यहां तक कि सड़क के किनारे नाश्ता और मिठाई बेचने वाले जैसे छोटे अनौपचारिक मालिक अपने उत्पादों और उनकी प्रतिष्ठा पर गर्व करते हैं। उनके मेन्यू में अक्सर नई वस्तुएं दिखाई देती हैं। जैसे कि कारीगरी उद्योग में नवाचार, वृद्धिशील और रूढ़िवादी है और व्यावसायिक भेदों की ध्यानपूर्वक सुरक्षा की जाती है क्योंकि इनमें बौद्धिक संपदा अधिकार मौजूद नहीं है (भोसले 2014)। लोकविद्या लगातार बढ़ती, विकसित, अनुकूलित और परिवर्तित होती है। हम कारीगरी उद्योग के आधुनिक उद्योगों के रूप में विकास के बारे में क्या जानते हैं, जैसे पावरलूम का मामला भी तकनीकी परिवर्तन को संभव बनाने में परंपरागत संस्थाओं के महत्व को रेखांकित करता है (हाइंस 2012)। भारत में नवाचार पर राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की रिपोर्ट (भारत सरकार 2007) कुछ एसएमई के साक्षात्कार के जरिए इस समस्या को संबोधित करता है, लेकिन अभी इस दिशा में बहुत अधिक काम किए जाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

पूर्व के तर्कों को इस संकेत के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए कि औपचारिक स्कूली शिक्षा महत्वहीन है या संगठित क्षेत्र में मौजूद ज्ञान संस्थाएं पर्याप्त हैं। एनसीईयूएस के लिए प्रश्न यह है कि 'क्या अनौपचारिक में पारंपरिक पद्धतियों से काम के दौरान कौशल अर्जन की मौजूदा प्रणाली के कार्य का तरीका पर्याप्त है?' (सेनगुप्ता व अन्य् 2009:9), जवाब 'नहीं' होना चाहिए। भली प्रकार से रूपांकित और सूचित नीति, कौशल मे सुधार, पारंपरागत व्यवसायों में आधुनिक तकनीक का संयोजन करने और आय वृद्धि के क्षेत्र में व्यापक बदलाव ला सकती है लेकिन जैसा कि एनसीईयूएस ने भी बताया है कि सरकार द्वारा चलाई जा रही व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम असंगठित क्षेत्र में नौकरी पाने का प्रयास करने वालों की मदद करने में सफल नहीं साबित हुए हैं (पूर्वोक्त, पृष्ठ 10)। ये संस्थान असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों और प्रतिष्ठानों से असंबद्ध बने हुए हैं। इसका विकल्प है मौजूदा असंगठित संस्थानों को इस क्षेत्र से भागीदारी के जरिए ही तैयार किया जाए। अन्य विकासशील देशों से भी इसकी मिसालें मिलती हैं, जैसे नाइजीरिया की राष्ट्रीय मुक्त शिक्षुता योजना (एनओएएस) और एनसीईयूएस द्वारा चर्चा की गई अन्य मिसालें (पूर्वोक्त, पेज 40-41) इस संबंध में उपयोगी हो सकती हैं। इस क्रम में, आगे असंगठित क्षेत्र द्वारा संचालित प्रणाली के अनुकूल दृष्टिकोण का उपयोग करके, ज्ञान उत्पादन, स्थानांतरण, नवाचार आदि में अनुसंधान करने की जरूरत है। अंत में, नीतियों से परे जाकर, ऐसे राजनीतिक आंदोलन की आवश्यकता है, जो औपचारिक ज्ञान के साथ लोकविद्या के लिए गरिमा और बराबरी के दर्जे की मांग करे। ❑

संदर्भः

• **जे बारबर (2004):** इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ट्रेनिंग एंड डेवलपमेंट, 8(2), 128-139 • **आर बार्नेट (2000):** वर्किंग नॉलेज इन रिसर्च एंड नॉलेज एट वर्क, रॉल्टे, न्यूयार्क, 15-31 • **ए बसोले (आगामी):** स्पेयर चेंज फॉर स्पेयर टाइम? होमवर्किंग वुमेन इन बनारस, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस • **ए बसोले(2014):** यूमास-बोस्टन वर्किंग पेपर नंबर 2014-07 • **ए बसोले (2012):** अप्रकाशित पीएचडी शोध प्रबंध, यूनिवर्सिटी ऑफ मैसाचुसेट्स, एमहर्स्ट, एमए • **एस.बिरला एवं ए बसोले (2013):** शोध परियोजना, अर्बन एस्पिरेशन इन ग्लोबल सिटीज़, मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट, जर्मनी, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, मुंबई • **पी.के.बिस्वास एवं ए.राज (1996):** स्किल फॉर्मेशन इन द इंडिजीनियस इंस्टीट्यूशंसः केसेज़ फ्रॉम इंडियाश इन स्किल एंड टेक्नालॉजिकल चेंजः सोसाइटी एंड इंस्टीट्यूशंस इन इंटरनेशनल पर्सपेक्टिव, हर-आनंद, नई दिल्ली, 73-104 • **सी डी कोनर (2005):** पीपुल्स हिस्ट्री ऑफ साइंसः माइनर्स, मिडवाइव्स एंड लो मैकेनिक्स, नेशन बुक्स • **जे.एम.फिंगर एवं पी.ई.शुलर (2004):** पुअर पीपुल्स नॉलेजः प्रोमोटिंग इंटलेक्चुअल प्रॉपर्टी इन डेवलपिंग कंट्रीज़, विश्व बैंक एवं ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस • **भारत सरकार (2004):** लघु उद्योग की तीसरी अखिल भारतीय जनगणना 2001-2002, विकास आयुक्त (एसएसआई) लघु उद्योग मंत्रालय • **भारत सरकार (2006):** भारत में रोजगार एवं बेरोजगारी की स्थिति 2004-05, एनएसएस 61 वें दौर की रिपोर्ट संख्या 515 • **भारत सरकार (2007):** भारत में नावाचार, राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, नई दिल्ली • **भारत सरकार (2012):** सूक्ष्म, लघु और मधयम उद्यमों की चौथी अखिल भारतीय जनगणना 2006-2007, विकास आयुक्त लघु उद्योग मंत्रालय • **भारत सरकार (2014):** भारत में रोजगार और बेरोजगारी की स्थिति 2011-12, एनएसएस 68 वें दौर की रिपोर्ट संख्या 554 • **ई.एल. ग्रॉसेन (1991):** ए जर्नल ऑफ इकनॉमी एंड सोसाइटी, 30(3), 350-381 • **ए.के. गुप्ता (2007):** आईआईटी-अहमदाबाद वर्किंग पेपर • **डी.ई. हाएन्स (2012):** स्मॉल टाउन कैपिटलिज़्म इन वेस्टर्न इंडियाः आर्टीशंस, मर्चेन्ट्स एंड द मेकिंग ऑफ द इनफार्मल इकनॉमी, 1870-1960, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, यूके • **जे. हेन्ज (2006):** कैम्ब्रिज जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स 30, 507-520 • **के. इलैया (2009):** पोस्ट हिन्दू इंडिया : ए डिसकोर्स ऑन दलित-बहुजन, सोशियो-स्पिरिचुअल एंड साइंटिफिक रिवोल्यूशन। सेज पब्लिकेशन, इंडिया • **पी. नॉरिंगा (1999):** आर्टीसन लेबर इन द आगरा फुटवियर इंडस्ट्रीः कंटीन्यूड इनफार्मिटी एंड चेंजिंग थ्रेट्स, 33(1-2), 303-328 • **ए.बी. कूगर एवं एल.एच. समर्स (1988):** इकोनोमैट्रिकाः जर्नल ऑफ द इकोनोमैट्रिक सोसाइटी, 259-293 • **एम. लीबेल एवं टी. रॉय (2004):** विश्व बैंक एवं ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 73-104 • **आर. पार्थसारथी (1999):** जर्नल ऑफ इन्टरप्रिन्योरशिप 8 (1): 45-65 • **एस. सहस्रबुद्धे एवं सी. सहस्रबुद्धे (2001):** लोकविद्या दृष्टिकोण, लोकविद्या प्रतिष्ठा अभियान, वाराणसी • **ए. सेनगुप्ता, आर.एस. श्रीवास्तव, के. कन्नन, वी. मल्होत्रा, बी. युगान्धर एवं टी. पापोला (2007):** असंगठित क्षेत्रें के उद्यमों के लिए राष्ट्रीय आयोग, नई दिल्ली • **ए. सेनगुप्ता, आर.एस. श्रीवास्तव, के. कन्नन, वी. मल्होत्र, बी. युगान्धर एवं टी. पापोला (2009):** असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों के लिए राष्ट्रीय आयोग, नई दिल्ली • **डब्ल्यू.डब्ल्यू. वुड (2008) मेड इन मैक्सिकोः** ज़ैपोटिक वीवर्स एंड द ग्लोबल एथनिक आर्ट मार्केट, इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस • **आर. वॉएटेक, पी. श्रॉफ-मेहता एवं पी.सी. मोहन (2004):** लोकल पाथवेज़ टू ग्लोबल डेवलपमेंट। नॉलेज एंड लर्निंग ग्रुप, आफ्रीका क्षेत्र, विश्व बैंक